पाठ - 2

ब्रिटिश प्रशासन, नीतियाँ और प्रभाव

आइए जानें–

- दोहरा शासन प्रबंध से क्या आशय है?
- रेग्यूलेटिंग एक्ट एवं पिट इण्डिया एक्ट के प्रमुख प्रावधान क्या थे?
- स्थाई बन्दोबस्त व्यवस्था क्या थी?
- ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियाँ एवं उसके क्या दुष्परिणाम हुए?
- ब्रिटिश शासन द्वारा किए गए सुधारों के क्या उद्देश्य थे?

कर्नाटक युद्धों के द्वारा ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अपनी प्रतिद्वंदी फ्रांसीसी कम्पनी को भारत के बाहर का रास्ता दिखा दिया। प्लासी और बक्सर के युद्धों द्वारा बंगाल, बिहार, उड़ीसा, अवध और मुगल सम्राट पर अपना दबदबा स्थापित कर लिया। इलाहाबाद की संधि द्वारा कम्पनी को बंगाल, बिहार और उड़ीसा में दीवानी के अधिकार मिल गये। अब वे व्यापारी से प्रशासक बने गये। कम्पनी की महत्वाकाँक्षा में वृद्धि होती गई और दक्षिण भारत में मैसूर के साथ युद्ध करके दक्षिण भारत को अपने अधिकार में ले लिया, दूसरी तरफ उत्तर भारत में मराठों को युद्ध में पराजित करके संपूर्ण उत्तर भारत को अपने झण्डे के नीचे ले लिया। जिन राज्यों को कम्पनी द्वारा अपने अधिकार में नहीं लिया गया था उनके साथ संधि करके अपने वर्चस्व में ले लिया गया अर्थात् सन् 1857 ई. तक सम्पूर्ण भारत प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजों के अधिकार में था।

इस प्रकार लाभ कमाने वाली व्यापारिक कम्पनी ने भारत की राजनैतिक स्थिति का लाभ उठाकर सत्ता प्राप्त कर ली, किंतु सत्ता प्राप्त इस कम्पनी के कर्मचारियों का मूल चरित्र वही एक व्यापारी तथा दलाल का बना रहा जो प्रशासन के लिए अक्षम ही नहीं बल्कि प्रशासनिक योग्यताओं से भी दूर थे। कम्पनी द्वारा नियुक्त अब तक के कर्मचारी अर्द्धशिक्षित, अदूरदर्शी, बेईमान और धन के लालची थे। उनका उद्देश्य धन प्राप्त करना था। इसके लिए वे किसी भी सीमा तक जा सकते थे। अत: व्यापारी, दलाल तथा क्लर्क के रूप में भर्ती होकर आये इन कर्मचारियों के लिए व्यवहार में दक्षता, चरित्र में प्रशासक का व्यवहार तथा स्थायित्व के लिए दूरदर्शी एवं नीतिकुशल बनना आवश्यक हो गया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी को अपने इन्हीं कर्मचारियों से प्रशासक का कार्य लेना था जिसके लिए समय-समय पर नियम पारित किए गए।

कर्मचारियों की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाने के प्रयास किये गये। उनको प्रशासक का व्यवहार करना सिखाया गया। इंग्लैण्ड से कुछ पढ़े-लिखे अफसर और कर्मचारी भेजे गये। इतना सब कुछ करने

के उपरांत भी कम्पनी के कर्मचारियों का मूल चरित्र व्यापारिक ही बना रहा, वे अपनी आदतों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे जिसका नुकसान भारतीय जनता को उठाना पड़ा। कम्पनी के कर्मचारियों ने भारतीय व्यापारियों, किसानों, दस्तकारों, राजा-महाराजाओं आदि सभी को लूटा।

बंगाल में दोहरा शासन प्रबन्ध

बक्सर युद्ध के बाद कम्पनी ने मुगल सम्राट शाहआलम के साथ इलाहाबाद की संधि कर ली, जिसके अनुसार बंगाल, बिहार और उड़ीसा में दीवानी के अधिकार कम्पनी को मिल गये थे।

दीवानी के अधिकार मिल जाने से कम्पनी का बंगाल के समस्त राजस्व पर अधिकार हो गया। बंगाल के नवाब नजमुदौला ने बंगाल के निजामत के अधिकार भी कम्पनी को सौंप दिये, किंतु कम्पनी इतना बड़ा उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेने के लिए तैयार नहीं थी। वह केवल सेना तथा कोष पर अपना अधिकार रखना चाहती थी। इस समय बंगाल का गवर्नर राबर्ट क्लाइव था। वह जानता था कि कम्पनी के पास अभी इतनी शक्ति नहीं है कि वह एक साथ दीवानी तथा निजामत के कार्य देख सके।

क्लाइव ने काफी सोच-विचार के बाद निजामत का कार्य बंगाल के नवाब पर छोड़ दिया और दीवानी का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया। निजामत अर्थात शासन करना (शान्ति व्यवस्था तथा बाह्य आक्रमण से सुरक्षा) और फौजदारी का कार्य बंगाल के नवाब के पास रहा। राजस्व (भूमि कर) वसूल करने के लिए कम्पनी ने रजा खाँ और सिताब राय को नियुक्त किया। रजा खाँ को बंगाल का और सिताब राय को बिहार का नायब दीवान नियुक्त किया गया। प्राप्त राजस्व में से निजामत का व्यय,बंगाल के नवाब का खर्च और मुगल सम्राट को पेंशन देने के बाद शेष राशि कम्पनी के कोष में जमा की जाती थी। इस प्रकार बंगाल की शक्ति कंपनी तथा नवाब के बीच विभक्त हो गई। इसी को बंगाल का दोहरा शासन प्रबंध कहा जाता है।

दोहरे शासन के दुष्परिणाम

बंगाल की समस्त शक्ति कम्पनी के हाथों में थी, किन्तु वह अपने उत्तरदायित्वों से मुक्त थी। नवाब के पास शासन का संपूर्ण दायित्व था, परन्तु उसके पास न तो शक्ति थी और न ही धन था। कम्पनी के पास सेना और कोष दोनों थे, किंतु शासन और सुरक्षा के प्रति उसकी जिम्मेदारी नहीं थी। परिणाम स्वरूप बंगाल के दोहरे शासन प्रबंध ने बंगाल की जनता को अपार कष्टों में डाल दिया।

द्वैध शासन के कारण बंगाल की कृषि, उद्योग और व्यापार सभी कुछ नष्ट होते गए। साधारण जनता दरिद्रता और कम्पनी के अत्याचारों से पीड़ित थी। ऐसी स्थिति में हा-हा-कार मच गया। सन् 1772 ई. में कम्पनी द्वारा वारेन हेस्टिंग्ज को बंगाल का गवर्नर नियुक्त कर दिया गया। उसने दोहरे शासन प्रबंध की कुप्रथा को 1772 ई. में समाप्त कर दिया और निजामत तथा दीवानी के अधिकार प्रत्यक्ष रूप से अपने हाथों में ले लिए। बंगाल के नवाब का पद पूरी तरह से पेंशन का बना दिया गया।

शिक्षण संकेत -

- पाठ में आने वाले विशिष्ट शब्दों के अर्थ छात्रों को समझाएँ।

रेग्यूलेटिंग एक्ट (1773 ई.)

ईस्ट इण्डिया कम्पनी एक स्वतंत्र व्यापारिक संस्था थी। कम्पनी के कार्यों का संपूर्ण प्रबंध एक संचालन समिति (Court of Directors) करती थी। यही समिति कम्पनी के कर्मचारियों को नियुक्त और पदच्युत करती थी। कम्पनी ही व्यापारिक नीति निर्धारित करती, सेनाओं की व्यवस्था करती और विदेश नीति को निर्धारित करती थी। परंतु सन् 1757 ई. के बाद कम्पनी का मूल चरित्र बदल चुका था। अब वह मात्र व्यापारिक कम्पनी न रहकर प्रशासनिक कम्पनी बन चुकी थी। इंग्लैण्ड की सरकार कम्पनी के कार्यों से अनभिज्ञ बनी नहीं रह सकती थी। बंगाल की लूट, वहाँ की कानून व्यवस्था और कर्मचारियों के अत्याचारों से पीड़ित बंगाल की जनता की जानकारी उसको थी, बंगाल के दोहरे शासन प्रबंध ने किस प्रकार बंगाल की व्यवस्था को तहस-नहस किया था, इसकी भी उसको जानकारी थी। अपार धन संपदा जमा करने के बाद भी कम्पनी की वित्तीय स्थिति संकट में थी, इससे ब्रिटिश शासन को लगा कि भारत में कम्पनी की गतिविधियों पर नियंत्रण रखना आवश्यक है। इसलिए ब्रिटिश संसद ने सन् 1773 ई. में रेग्यूलेटिंग एक्ट पारित किया। इस एक्ट के दो प्रमुख उद्देश्य थे -1. कम्पनी के संगठन के दोषों को दूर करना, और 2. भारत में कम्पनी के शासन के दोषों का निराकरण करना।

रेग्यूलेटिंग एक्ट पारित करने के कुछ और भी कारण थे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी अब केवल व्यापारिक संस्था ही नहीं थी अपितु वह एक राजनीतिक संस्था भी बन चुकी थी। उसके कार्यों एवं अधिकारों में परिवर्तन आ चुका था। कम्पनी को अब युद्ध एवं संधि के दायित्व भी निभाने थे। न्याय, सुरक्षा और राजस्व के कार्य भी उसके पास थे। कम्पनी के शासनकाल में भारतीय प्रांतों की आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति में तीव्र गति से गिरावट आई थी। कम्पनी के कर्मचारी भ्रष्टाचार में लिप्त थे। वे कम्पनी के हितों को पूरा करने के स्थान पर स्वयं की स्वार्थपूर्ति में लगे थे। इन सभी बातों पर विचार करने के बाद ब्रिटिश संसद ने कम्पनी के ऊपर अंकुश लगाने के लिए सन् 1773 ई. में रेग्यूलेटिंग एक्ट पारित किया तथा इसे 1774 ई. में लागू किया गया।

रेग्यूलेटिंग एक्ट के प्रावधान

रेग्यूलेटिंग एक्ट में अनेक प्रावधान किये गये थे। इस एक्ट के द्वारा एक नया प्रशासनिक ढाँचा खड़ा किया गया। अभी तक बंगाल, मद्रास एवं बम्बई की प्रेसीडेंसी स्वतंत्र थी। इस अधिनियम द्वारा उनकी स्वतंत्रता समाप्त कर दी गई। बंगाल का गवर्नर बम्बई तथा मद्रास का भी गवर्नर जनरल बना दिया गया। गवर्नर जनरल की सहायता के लिए चार सदस्यों की एक परिषद (कौंसिल) बनाई गई। गवर्नर जनरल को सैनिक तथा असैनिक शासन का स्वामी बनाया गया। इसे युद्ध एवं संधि करने के अधिकार दे दिए गए। गवर्नर जनरल और उसकी परिषद पर संचालक मंडल का नियंत्रण रखा गया। इस अधिनियम के द्वारा कलकत्ता में एक सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गई।

शिक्षण संकेत -

- रेग्यूलेटिंग एक्ट के प्रमुख प्रावधानों व कमियों को चार्ट बनाकर समझाएँ।

एक्ट के अनुसार कम्पनी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को ऊँचा वेतन दिया जाने लगा और उनके द्वारा उपहार, भेंट आदि लेने तथा व्यक्तिगत व्यापार करने पर रोक लगा दी गई।

एक्ट में कमियाँ

ब्रिटिश संसद द्वारा कम्पनी के मामलों में यह प्रथम हस्तक्षेप था। इसके द्वारा कम्पनी की कार्य प्रणाली में सुधार की संभावना थी, परंतु जल्दी ही इसके कई दोष सामने आने लगे। गवर्नर जनरल तथा उसकी परिषद में सदैव झगड़े होते रहे। कोई भी निर्णय लेना आसान नहीं था। गवर्नर जनरल की स्वतंत्रता बाधित हो गई। सर्वोच्च न्यायालय तो स्थापित कर दिया गया मगर उसका अधिकार क्षेत्र निश्चित नहीं किया गया। प्रशासनिक तथा न्यायिक विभाग के अधिकार क्षेत्र अस्पष्ट थे। गवर्नर जनरल को अन्य प्रेसीडेंसियों पर पूर्ण अधिकार नहीं दिये गये थे।

विलियम पिट का इण्डिया एक्ट (1784 ई.)

रेग्यूलेटिंग एक्ट के दोषों को दूर करने, कम्पनी के भारतीय क्षेत्रों में प्रशासन को कुशल तथा उत्तरदायित्व पूर्ण बनाने एवं भारत स्थित कम्पनी के कार्य क्षेत्र व कार्य प्रणाली को नियंत्रित करने के उद्देश्य से सन् 1784 ई. में ब्रिटिश प्रधानमंत्री विलियम पिट ने 'पिट इण्डिया एक्ट' पारित कराया।

भारत स्थित कम्पनी के कार्य क्षेत्र तथा कार्य प्रणाली आदि पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए ब्रिटेन के प्रधानमंत्री विलियम पिट ने सन् 1784 ई. में एक कानून पारित कराया जिसको पिट इण्डिया एक्ट कहा जाता है।

पिट इण्डिया एक्ट की विशेषताएँ

इस एक्ट ने कम्पनी के मामलों और भारत में उसके प्रशासन पर ब्रिटिश सरकार को अधिकाधिक नियंत्रण का अधिकार दे दिया था। नवीन कानून के अनुसार छः सदस्यीय नियंत्रण मण्डल की स्थापना की गई थी। इसका कार्य निदेशक मण्डल और भारत सरकार को आवश्यक परामर्श देना था तथा उनकी कार्य प्रणाली पर नियंत्रण रखना था। भारत के शासन, सेना तथा लगान सम्बन्धी मामलों पर इस छः सदस्यीय नियंत्रण मण्डल (बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल) का नियंत्रण कायम किया गया। बोर्ड को भारतीय प्रशासन के संबंध में निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण सम्बन्धी विस्तृत अधिकार दिए गए।

इस अधिनियम की महत्वपूर्ण बात यह थी कि इसके द्वारा भारत में कम्पनी के आक्रामक युद्धों को नियंत्रित कर दिया गया था। इस एक्ट में कहा गया कि भारत में साम्राज्य का विस्तार इस राष्ट्र की इच्छा, सम्मान तथा नीति के विरूद्ध है, लेकिन इसका पालन अंग्रेजों ने नहीं किया। 1784 ई. के एक्ट से गवर्नर जनरल एक शासक की भूमिका में आ गया था। वह सेना, पुलिस, सरकारी कर्मचारियों तथा न्यायपालिका के माध्यम से शासन चलाता था।

सिविल सर्विस का गठन

वारेन हेस्टिंग्ज के पश्चात सन 1786 में लार्ड कार्नवालिस भारत में गवर्नर जनरल बनकर आया। लार्ड

कार्नवालिस को भारत में सिविल सर्विस की स्थापना का जनक कहा जाता है। उसका शासन काल कम्पनी के सीमा विस्तार से अधिक प्रशासनिक सुधारों के लिए महत्वपूर्ण है। उसने शासन के प्रत्येक क्षेत्र में आवश्यक सुधार किये। उसके प्रयासों के परिणामस्वरूप न्याय, पुलिस और प्रशासन, कर तथा व्यापार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए तथा कम्पनी के कर्मचारियों के बीच व्याप्त भ्रष्टाचार में कमी आई थी।

लार्ड कार्नवालिस ने शासन से भारतीयों को विधिवत दूर रखने की नीति अपनाई थी। ब्रिटेन के युवा सिविल सर्विस की ओर अधिक आकर्षित थे।

सिविल सर्विस सदस्यों की नियुक्ति सन् 1833 ई. तक निदेशकों द्वारा की जाती थी। उसके बाद प्रतियोगी परीक्षा शुरू की गई। कम्पनी पर शासन करने का दायित्व बढ़ता जा रहा था। साथ ही उनका भारतीय रीति-रिवाज और संस्कृति से परिचित होना भी जरूरी हो गया था। अतः कलकत्ता में फोर्ट-विलियम कॉलेज की स्थापना सन् 1801 ई. में की गई थी। इसके माध्यम से सिविल सर्विस के सदस्यों को प्रशिक्षण दिया जाता था। कुछ समय बाद प्रशिक्षण के लिए ब्रिटेन में ईस्ट इण्डिया कॉलेज की स्थापना हुई।

न्याय एवं कानून व्यवस्था

किसी भी देश के शासन संचालन के लिए नियम कानूनों का होना आवश्यक है जिनका अनुपालन सरकार एवं जनता द्वारा किया जाना जरूरी है। ब्रिटिश शासनकाल में सरकार द्वारा न्यायालयों की स्थापना की गई। न्यायालयों द्वारा कानूनों का उल्लंघन करने वाले लोगों पर कठोर दण्डात्मक कार्रवाई की जाती थी। प्रारंभ में अंग्रेजों ने भारत में प्रचलित कानूनों के साथ छेड़छाड़ नहीं की और विवाह, उत्तराधिकार सम्बंधी कानून, रीति-रिवाज और धर्म-ग्रंथों पर आधारित पुरातन कानूनों को यथावत चलने दिया, किंतु अंग्रेज और भारतीयों में विवाद होने पर उसका निराकरण अंग्रेजी कानून से होता था।

लार्ड कार्नवालिस ने न्याय व्यवस्था में जितने सुधार किये उन्हें एकत्र कर सन् 1793 ई. में कार्नवालिस संहिता का नाम दिया गया। यह शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत पर आधारित था।

सन् 1793 ई. में बनाये गये बंगाल रेग्यूलेशन एक्ट के तहत न्यायालयों में भारतीयों के निजी एवं मालिकाना अधिकारों के लिए फैसले होने लगे थे। इस एक्ट में हिन्दुओं और मुसलमानों के निजी कानूनों को शामिल किया गया था। इससे भारत में लिखित कानूनों का चलन आरंभ हुआ था। ब्रिटिश भारत के अन्य प्रदेशों में भी इस प्रकार के कानून बनाये गये थे।

कम्पनी के शासन पर नियंत्रण

समय-समय पर नवीन कानून बनाकर ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में विधि का शासन प्रारंभ किया गया। विधि के शासन का अर्थ था कि कानून की दृष्टि से सभी व्यक्ति समान हैं, परंतु अंग्रेज और भारतीयों पर एक जैसे कानून लागू नहीं होते थे।

भारत में अंग्रेजी शासन की जड़ें मजबूत होती जा रही थी। सन् 1784 ई. में बने पिट्स इन्डिया एक्ट ने भारत पर द्वैध शासन स्थापित किया। इसमें शासकीय कार्यों को कम्पनी तथा ब्रिटिश सम्राट चलाता था। सन् 1793 ई. में कम्पनी के व्यापार करने का विशेषाधिकार 20 वर्षों के लिए बढ़ा दिया था। सन् 1813 ई. में कम्पनी का व्यापारिक विशेषाधिकार समाप्त कर दिया गया। अब कोई भी अंग्रेज भारत में व्यापार कर सकता था।

अंग्रेजी सरकार भारत पर अपना नियंत्रण बढ़ाना चाहती थी, जिसके लिए कम्पनी का शासन पर से नियंत्रण को कम करना जरूरी था। इसीलिए भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था का केन्द्रीयकरण किया गया था। शासन संचालन की इस नवीन व्यवस्था में भारतीयों को कम स्थान प्राप्त हुए। ऊँचे एवं महत्व वाले पदों पर भारतीयों को नियुक्त नहीं किया जाता था।

ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियाँ

भारत में कम्पनी के शासन की स्थापना के साथ ही अंग्रेजों ने समय-समय पर नई-नई आर्थिक नीतियाँ अपनाईं थी। इन आर्थिक नीतियों के कारण व्यापार-वाणिज्य, उद्योग-धंधों तथा भू-राजस्व प्रणाली और कृषि व्यवस्था में अनेक बदलाव आये थे। अंग्रेजों ने अपने हितों में जो नीतियाँ अपनाई थीं, उनसे भारतीय अर्थव्यवस्था का परम्परागत ढाँचा चरमरा गया। भारतीय कृषि, उद्योग तथा व्यापार पर ब्रिटिश की आर्थिक नीतियों का अत्यन्त बुरा प्रभाव पड़ा।

भारत में अधिकांश जनसंख्या गाँवों में निवास करती थी। जनता स्वयं अपनी आजीविका पर निर्भर थी। ग्रामीण लोग अधिकांशत: खेती-किसानी का काम किया करते थे। किसान अपनी फसल का एक निश्चित भाग लगान के रूप में अपने स्वामी (जमींदार) या शासक(ब्रिटिश कलेक्टर) को देते थे। राज्य सामान्यत: गाँव के पटेल या प्रधान के माध्यम से लगान वसूलते थे। ग्रामीणों के निश्चित अधिकार थे, जिसके तहत उन्हें भूमि से बेदखल नहीं किया जाता था। भारत में कम्पनी के शासन की स्थापना के साथ ही अंग्रेजों ने अपने अधिकारियों और भारतीय लगान वसूल कर्ताओं के माध्यम से पुरानी व्यवस्था को जारी रखा। अंग्रेज अधिकारियों द्वारा लगान वसूलते समय किसानों को प्रताड़ित भी किया जाता था।

भू राजस्व व्यवस्था

सन् 1793 ई. में कार्नवालिस ने कंपनी की आय बढ़ाने तथा उसमें स्थिरता लाने के लिए बंगाल, उड़ीसा व बिहार में स्थाई बंदोबस्त लागू किया। इस व्यवस्था में जमींदारों को भू-स्वामी मान लिया गया। भूमि पर उनका वंशानुगत अधिकार हो गया था। चेन्नई और मुम्बई क्षेत्र में रैय्यतवाड़ी व्यवस्था लागू की गई। इसमें भूमि जोतने वाले को भू-स्वामी माना गया। इनसे कंपनी सीधे कर लेती थी। लगान न देने पर किसानों का भूमि से अधिकार समाप्त कर दिया जाता था। इस व्यवस्था से कृषि का उत्पादन बहुत घट गया, किसानों पर अत्याचार बढ़ गए, किंतु सरकारी राजस्व में भारी वृद्धि हुई। अवध क्षेत्र में महालवाड़ी व्यवस्था लागू की गई- यह जमींदारी व्यवस्था का सुधरा रूप था- इस व्यवस्था में प्रत्येक महाल (गाँव) के लिए कर निश्चित किया गया।

- ❖ **स्थाई बंदोबस्त व्यवस्था से अंग्रेजी सरकार को हानि भी उठानी पड़ी क्योंकि जमींदार किसानों से मनमाना लगान वसूलते थे, किंतु वे एक निश्चित मात्रा में ही ब्रिटिश शासन को लगान की राशि देते थे।**
- ❖ **रैयतवाड़ी व्यवस्था में प्रत्येक कृषक, जो जमीन जोत रहा था, उसे उस जमीन का भू-स्वामी मानकर उसके साथ लगान की शर्तें तय की जाती थीं।**
- ❖ **महालवाड़ी व्यवस्था में किसान का भूमि पर अधिकार नहीं रहता था।**

अंग्रेजी भू-राजस्व नीति के परिणाम स्वरूप जमीन आसानी से एक व्यक्ति के हाथों से दूसरे व्यक्ति के हाथों में बेची जा सकती थी। जमीन पर स्वामित्व प्राप्त होने से लोगों का आकर्षण जमीन की ओर बढ़ने लगा। कुटीर उद्योग विनाश के कगार पर थे। किसानों पर कर्ज का बोझ बढ़ गया था। सूखे और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं के चलते किसानों की दशा और भी सोचनीय हो जाती थी। जमीन को हस्तांतरण योग्य बनाकर और उसका बँटवारा करके विखंडित कर दिया गया था।

सरकारी नीतियों का घातक परिणाम यह निकला कि इसके चलते कुटीर उद्योग, दस्तकार और शिल्पकार पतन के गर्त में चले गये। प्रारंभिक तौर पर इन शिल्पकारों और दस्तकारों द्वारा तैयार किये गये माल को वे विदेशों में बेचकर लाभ कमाते थे। इनकी माँग ब्रिटिश बाजारों में बढ़ती गई, जिसका असर अंग्रेजी उद्योगों पर पड़ने लगा। उनके समक्ष अस्तित्व का प्रश्न खड़ा हो गया। इसी के चलते ब्रिटिश सरकार ने भारतीय वस्त्रों के प्रयोग एवं व्यापार पर प्रतिबंध लगा दिया।

सन् 1813 ई. के चार्टर एक्ट के पास होने के समय तक इंग्लैण्ड को विशाल विदेशी और औपनिवेशिक बाजार उपलब्ध हो चुका था। इन बाजारों में इंग्लैण्ड में बनी हुई वस्तुओं को बेचकर लाभ कमाया जा सकता था। चार्टर एक्ट के द्वारा ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापारिक अधिकार समाप्त कर दिये गये और मुक्त व्यापार की नीति अपनाई गई। परिणामस्वरूप ब्रिटिश सामान नाम मात्र के सीमा शुल्क पर भारत आने लगा। भारत में यह सामान देशी दस्तकारों द्वारा तैयार किये गये सामान से सस्ता पड़ता था। इसलिए भारतीय बाजारों में देशी वस्तुओं की माँग घटी और देशी उद्योग मंदा पड़ता चला गया। विशिष्ट वस्तुओं में सूती कपड़ों का विशेष महत्व था। इनका उत्पादन देश के अनेक भागों में होता था। उत्पादन के प्रमुख केन्द्र – ढ़ाका, आगरा, कृष्णनगर, वाराणसी, लखनऊ, मुल्तान, बुरहानपुर, लाहौर, सूरत, भड़ौच, अहमदाबाद और मदुरई आदि महत्वपूर्ण थे।

सन 1700 ई. और सन 1720 ई. में इंग्लैण्ड में कानून बनाकर भारतीय कपड़े के आयात पर रोक लगा दी गई। जिसका भारतीय कपड़ा उद्योग पर बुरा प्रभाव पड़ा। इंग्लैण्ड के कपड़ा उद्योग ने भारतीय कपड़ा उद्योग की स्थिति खराब कर दी। कम्पनी का लाभ बढ़ाने के लिए एजेन्टों ने कपड़ा तथा अन्य वस्तुओं के भारतीय उत्पादकों को विवश किया कि वे उनको बाजार दर से 20 से 40 प्रतिशत कम कीमत पर माल दें। मशीनों से निर्मित सस्ते सूती कपड़ों के आने से भारतीय कपड़ा उद्योग को सबसे ज्यादा क्षति पहुँची। अंग्रेजों की आर्थिक नीतियों ने भारतीय कुटीर उद्योगों को नष्ट कर दिया।

रेल एवं संचार व्यवस्था

यातायात व्यवस्था को सुगम बनाने के लिए रेल एवं सड़क मार्गों का विकास किया गया। साथ ही डाक-तार (संचार) सुविधाओं का भी विकास किया गया। विलियम बेंटिक और डलहौजी ने अनेक सड़कों की मरम्मत का कार्य कराया। भारत के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र सड़कों एवं बंदरगाहों से जोड़े गए। नदियों के माध्यम से यातायात एवं व्यापार को बढ़ाने के लिए नावें चलाई गईं।

डलहौजी ने आधुनिक डाक तार (संचार) व्यवस्था को शुरु कराया। उसने पहली बार डाक टिकिट जारी कराए। उसी के प्रयासों से पहली बार टेलीग्राफ लाइन कलकत्ता से आगरा तक डाली गई थी। इस व्यवस्था का लाभ अंग्रेजी सरकार को अत्यधिक मिला। परिवहन और संचार के साधनों में हुए सुधारों से भारत को ब्रिटिश वस्तुओं का बाजार और ब्रिटिश उद्योगों के लिए कच्चे माल को प्राप्त करने, सैनिक सामग्री व सैनिकों को कम समय में एक स्थान से दूसरे स्थान में भेजने में आसानी हुई।

परिवहन के क्षेत्र में रेल व्यवस्था के भी क्रांतिकारी परिणाम निकले। भारत में पहली रेलगाड़ी सन् 1853 ई. में बम्बई और थाना के बीच चलाई गई।

18वीं एवं 19वीं सदी का भारतीय समाज

18वीं व 19वीं शताब्दी में भारतीय समाज में व्याप्त अशिक्षा और अज्ञानता के कारण अनेक प्रकार की रूढ़ियों और बुराइयों ने घर कर लिया था। अपने आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति में लगी अंग्रेजी हुकूमत ने प्रारंभिक तौर पर इस ओर ध्यान नहीं दिया, परन्तु कुछ सुधारवादी प्रशासकों ने भारतीय समाज में प्रचलित अमानवीय एवं कुरीतिपूर्ण रूढ़ियों को दूर करने के लिए अपने स्तर पर प्रयास किए।

तत्कालीन समय में कन्यावध की कुप्रथा कुछ क्षेत्रों में प्रचलित थी। कन्या को जन्म लेते ही मार दिया जाता था। इन कुरीतियों पर रोक लगाने के लिए सरकार ने अनेक कानूनों का निर्माण किया। भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति भी दयनीय थी। पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा, स्त्री अशिक्षा आदि के कारण स्त्रियों की स्थिति सोचनीय होती गई। सन 1829 ई. के एक कानून द्वारा सती प्रथा पर रोक लगाई गई। इस तरह की तमाम कुप्रथाओं के विरुद्ध राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद विद्यासागर, स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द जैसे समाज सुधारकों ने महत्वपूर्ण कार्य किए।

समाज में दास प्रथा के रूप में एक अन्य कुरीति पनप रही थी। गरीबी के कारण लोग अपने बच्चों को बेचने पर विवश थे। सरकार ने सन 1843 ई. में कानून बनाकर दास प्रथा पर भी प्रभावी रोक लगाई।

भारत में शिक्षा की व्यवस्था

भारत में आधुनिक शिक्षा के आरम्भ होने से पहले पाठशालाएँ, मकतब और उच्च शिक्षा के लिए टोल (गुरू-आश्रम) तथा मदरसा होते थे। प्रारंभिक स्तर पर विद्यार्थियों को स्थानीय भाषाओं में लिखे गए धार्मिक ग्रंथों, पत्र लेखन और गणित पढ़ाए जाते थे। उच्च शिक्षा में मुख्यत: व्याकरण, भाषा-साहित्य, धर्म शास्त्र, तर्क शास्त्र, विधि शास्त्र, चिकित्सा शास्त्र तथा ज्योतिष शास्त्र का विशेष अध्ययन होता था।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रारंभिक समय में इसी प्रकार की शिक्षा व्यवस्था प्रचलन में थी।

अंग्रेजों ने आधुनिक शिक्षा के क्षेत्र में अपने स्तर पर शुरुआत की। कुछ भारतीयों ने इस प्रयास में उनका सहयोग भी किया। इसी समय ईसाई मिशनरियों ने भी शिक्षा के क्षेत्र में प्रयास किए, किन्तु उन्होंने ईसाईयत और उससे संबंधित शिक्षा पर ही अधिक बल दिया। सन 1781 ई. में कलकत्ता मदरसा की स्थापना की गई। इसमें अरबी और फारसी की शिक्षा दी जाती थी। इसी क्रम में सन 1784 ई. में सर विलियम जोंस ने एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की स्थापना की। इसके माध्यम से प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए गए। सन 1791 में वाराणसी में हिन्दू विधि (कानून) और दर्शन के लिए संस्कृत कॉलेज की स्थापना की गई। शिक्षा के क्षेत्र में कम्पनी द्वारा भी बाद में महत्वपूर्ण प्रयास किए गए।

सन 1835 में सरकार ने भारतीयों को यूरोपीय साहित्य और ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देने का निर्णय लिया। इसके तहत अंग्रेजी सरकार द्वारा खोले गए कुछ स्कूलों में अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाया गया। धीरे-धीरे शिक्षा का प्रसार भारत में बढ़ता गया। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। पश्चिमी शिक्षा के प्रसार के फलस्वरूप भारत में शिक्षित मध्यम वर्ग का उदय हुआ। इस कारण कम्पनी की नौकरियों में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त भारतीयों को अवसर मिला।

अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्राप्त भारतीयों और शेष भारतीयों के बीच दूरियाँ बढ़ती गईं। अंग्रेजी के सम्पर्क में आने से भारतीय आधुनिक शिक्षा, ज्ञान-विज्ञान, स्वतन्त्रता, समानता, जनतंत्र, राष्ट्रीयता, विशिष्ट क्रांतियाँ और आधुनिक विचारों के सम्पर्क में आए। छापाखाना और संचार माध्यमों में आए परिवर्तन के चलते उन्हें विश्व में हो रहे प्रमुख घटनाक्रमों, आविष्कारों एवं जनविकास की योजनाओं से परिचित होने के अवसर मिले।

अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनकर लिखिए –

1. ब्रिटिश संसद ने रेग्यूलेटिंग एक्ट कब पारित किया था–

   क. 1750 ई.   ख. 1773 ई.

   ग. 1857 ई.   घ. 1940 ई.

2. एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की स्थापना कब हुई थी–

   क. 1784 ई. में   ख. 1790 ई. में

   ग. 1801 ई. में   घ. 1901 ई. में

3. सन 1793 ई. में स्थाई बन्दोबस्त व्यवस्था किसके द्वारा लागू की गई थी–

   क. विलियम पिट के द्वारा   ख. राबर्ट क्लाइव के द्वारा

   ग. वारेन हेस्टिंग्ज के द्वारा   ग. लार्ड कार्नवालिस द्वारा

4. सन 1813 ई. में कौन सा एक्ट पारित किया गया–

क. चार्टर एक्ट　　ख. पिट इंडिया एक्ट

ग. रेग्यूलेटिंग एक्ट　　घ. सिविल सर्विस एक्ट

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. क्लाइव ने निजामत का कार्य .... पर छोड़ दिया था।
2. सन 1772 ई. में .... बंगाल का गवर्नर नियुक्त किया गया था।
3. भारत में सिविल सर्विस की स्थापना .... ने की थी।
4. रैयतवाड़ी व्यवस्था सर्वप्रथम .... और बम्बई में शुरु की गई।
5. आधुनिक डाकतार (संचार) व्यवस्था को .... ने शुरु किया था।

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. भूमिकर वसूल करने के लिए कम्पनी द्वारा किसे नियुक्त किया गया था?
2. कार्नवालिस द्वारा किए गए सुधारों को किस पुस्तक में संग्रहित किया गया है?
3. किसान का भूमि पर अधिकार किस व्यवस्था के अन्तर्गत समाप्त कर दिया गया था?

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. दोहरी शासन व्यवस्था का बंगाल की जनता पर क्या प्रभाव पड़ा?
2. रेग्यूलेटिंग एक्ट के प्रमुख उद्देश्य क्या थे?
3. पिट इंडिया एक्ट की मुख्य विशेषताएँ क्या थीं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियों का भारतीय उद्योगों पर क्या प्रभाव पड़ा? समझाइए।
2. स्थाई बंदोबस्त से क्या तात्पर्य है, उसके क्या दुष्परिणाम हुए।
3. 18वीं सदी में भारतीय समाज में कौन-कौन सी कुरीतियाँ व्याप्त थीं एवं सरकार द्वारा उनके सुधार हेतु क्या प्रयास किए गए?
4. ब्रिटिश प्रशासन द्वारा शिक्षा व्यवस्था में क्या सुधार किए गए और उसके क्या परिणाम हुए?

प्रायोजना कार्य–

- भारत के रेखा मानचित्र में सूती कपड़ा उत्पादक केन्द्रों एवं प्रमुख शिक्षा केन्द्रों को दर्शाइए।